पूर्वोत्तर भारत का महान वीर योद्धा लचित बरफूकन

मुगल आक्रांताओं से पूर्वोत्तर भारत की रक्षा करने वाले वीर योद्धा लचित बरफूकन का जीवन और व्यक्तित्व शौर्य, साहस, स्वाभिमान, समर्पण और राष्ट्रभक्ति का पर्याय है। इसलिए उन्हें पूर्वोत्तर भारत का 'शिवाजी' कहा जाता है

भारतवर्ष का इतिहास लचित बरफूकन जैसे वीर सपूतों के शौर्य और वीरता का महा आख्यान है। प्रसिद्ध इतिहासकार सूर्यकुमार भुइयां ने उन्हें पूर्वोत्तर भारत का 'शिवाजी' माना है। बरफूकन ने पूर्वोत्तर भारत में वही स्वातंत्र्य-ज्वाला जलाई, जो मुगल आक्रांताओं के विरुद्ध दक्षिण भारत में छत्रपति शिवाजी महाराज ने, पंजाब में गुरु गोबिंद सिंह ने और राजपूताना में महाराणा प्रताप ने जलाई थी। इसी तथ्य को रेखांकित करते हुए पूर्व राज्यपाल श्रीनिवास कुमार सिन्हा ने अपनी पुस्तक 'मिशन असम' में लिखा है, "महाराष्ट्र और असम हमारे विशाल और महान देश के दो विपरीत छोर पर हो सकते हैं, लेकिन वे एक सामान्य इतिहास, एक साझी विरासत और एक सामान्य भावना से एकजुट होते हैं। मध्ययुगीन काल में उन्होंने दो महान सैन्य नेताओं, महाराष्ट्र में छत्रपति शिवाजी और असम में लचित बरफूकन को जन्म दिया है।"

लचित बरफूकन का जन्म 24 नवंबर, 1622 को अहोम साम्राज्य के एक अधिकारी सेंग कालुक-मो-साई और माता कुंदी मराम के घर हुआ था। उनका पूरा नाम 'चाउ लाचित फुकनलुंग' था। लचित को अहोम साम्राज्य के राजा चक्रध्वज सिंह की शाही घुड़साल के अधीक्षक और महत्वपूर्ण सिमलूगढ़ किले के प्रमुख के रूप में नियुक्त किया गया। बहादुर और समझदार लचित जल्दी ही अहोम साम्राज्य के सेनापति बन गए। 'बरफूकन' लचित का नाम नहीं, बल्कि उनकी पदवी थी। पूर्वोत्तर भारत के हिंदू साम्राज्य अहोम की सेना की संरचना बहुत ही व्यवस्थित थी। एक 'डेका' 10 सैनिकों का, 'बोरा' 20 सैनिकों का, 'सैकिया' 100 सैनिकों का, 'हजारिका' 1,000 सैनिकों का और 'राजखोवा' 3,000 सैनिकों का

जत्था होता था। इस प्रकार बरफूकन 6,000 सैनिकों का संचालन करता था। लचित बरफूकन इन सभी के प्रमुख थे। बरफूकन बनने के बाद लचित के सामने बहुत-सी चुनौतियां थीं। उनके सामने एक तरफ मुगलों की विशाल और संगठित सेना थी, दूसरी तरफ अहोम साम्राज्य की निराश और विखंडित सेना। प्रथम चार वर्ष में लचित ने अपना पूरा ध्यान अहोम सेना के नव-संगठन और अस्त्र-शस्त्रों को इकट्ठा करने में लगाया। इसके लिए उन्होंने नए सैनिकों की भर्ती की, जल सेना के लिए नौकाओं का निर्माण कराया, हथियारों की आपूर्ति, तोपों का निर्माण और किलों के लिए मजबूत रक्षा प्रबंधन इत्यादि का दायित्व अपने ऊपर लिया। उन्होंने यह सब इतनी चतुराई और समझदारी से किया कि इन सब तैयारियों की मुगलों को भनक तक नहीं लगने दी।

लचित की युद्ध-कला एवं दूरदर्शिता का दिग्दर्शन मात्र अंतिम युद्ध में ही नहीं हुआ, अपितु उन्होंने 1667 में गुवाहाटी के ईटाकुली किले को मुगलों से स्वतंत्र कराने में भी कुशल युद्धनीति का परिचय दिया। मुगलों ने फिरोज खान को फौजदार नियुक्त किया, जो बहुत ही भोग-विलासी व्यक्ति था। उसने चक्रध्वज सिंह को सीधे-सीधे असमिया हिंदू कन्याओं को भोग-विलास के लिए अपने पास भेजने का आदेश दिया। इससे लोगों में मुगलों के खिलाफ आक्रोश बढ़ने लगा। लचित ने लोगों के इस आक्रोश का सही प्रयोग करते हुए इसी समय गुवाहाटी के किले को मुगलों से छीनने का निर्णय लिया। लचित के पास एक शक्तिशाली और निपुण जल सेना के साथ समर्पित और दक्ष जासूसों का संजाल था। लचित ने योजना बनाई,जिसके अनुसार 10-12 सिपाहियों ने रात के अंधेरे का फायदा उठाते हुए चुपके से किले में प्रवेश कर लिया और मुगल सेना की तोपों में पानी डाल दिया। अगली सुबह ही लचित ने ईटाकुली किले पर आक्रमण कर उसे जीत लिया।

जब औरंगजेब को इस विजय के बारे में पता चला तब वह गुस्से से तिलमिला उठा। उसने मिर्जा राजा जयसिंह के बेटे रामसिंह को 70,000 सैनिकों की बड़ी सेना के साथ अहोम से लड़ने के लिए असम भेजा। उधर लचित ने बिना एक पल व्यर्थ किए किलों की सुरक्षा मजबूत करने के लिए सभी आवश्यक तैयारियां प्रारंभ कर दीं। लचित ने अपनी मौलिक युद्ध नीति के तहत रातोंरात अपनी सेना की सुरक्षा हेतु मिट्टी से मजबूत तटबंधों का निर्माण कराया। जिसका उत्तरदायित्व लचित ने अपने मामा को दिया था। उन्होंने इस निर्माण-कार्य में अपने मामा की लापरवाही को अक्षम्य मानकर उनका वध कर दिया और कहा, "मेरे मामा मेरी मातृभूमि से बढ़कर नहीं हो सकते।"

लचित जैसे योद्धा के रहते मुगल आक्रांता पूर्वोत्तर भारत को अपने अधीन नहीं कर सके। 1671 में सरायघाट, ब्रह्मपुत्र नदी में अहोम सेना और मुगलों के बीच ऐतिहासिक लड़ाई हुई। रामसिंह को अपने गुप्तचरों से पता चला कि अन्दुराबली के किनारे पर रक्षा इंतजामों को भेदा जा सकता है और गुवाहाटी को फिर से हथियाया जा सकता है। उसने इस अवसर का फायदा उठाने के उद्देश्य से मुगल नौसेना खड़ी कर दी। उसके पास 40 जहाज थे, जो 16 तोपों और छोटी नौकाओं को ले जाने में समर्थ थे। यह युद्ध उस यात्रा का चरमोत्कर्ष था, जो यात्रा आठ वर्ष पहले मीर जुमला के आक्रमण से आरंभ हुई थी। भारतवर्ष के इतिहास में कदाचित् यह पहला महत्वपूर्ण युद्ध था, जो पूर्णतया नदी में लड़ा गया तथा जिसमें लचित ने पानी में लड़ाई (नौसैनिक युद्ध) की सर्वथा नई तकनीक आजमाते हुए मुगलों को पराजित किया। ब्रह्मपुत्र नदी का सरायघाट इस ऐतिहासिक युद्ध का साक्षी बना। इस युद्ध में ब्रह्मपुत्र नदी में एक प्रकार का त्रिभुज बन गया था, जिसमें एक ओर कामख्या मंदिर, दूसरी ओर अश्वक्लान्ता का विष्णु मंदिर और

तीसरी ओर ईटाकुली किले की दीवारें थीं। दुर्भाग्यवश लचित इस समय इतने अस्वस्थ हो गए कि उनका चलना-फिरना भी अत्यंत कठिन हो गया था, परंतु उन्होंने बीमार होते हुए भी भीषण युद्ध किया और अपनी असाधारण नेतृत्व क्षमता और अदम्य साहस से सरायघाट की प्रसिद्ध लड़ाई में लगभग 4,000 मुगल सैनिकों को मार गिराया।

इस युद्ध में अहोम सेना ने अनेक आधुनिक युक्तियों का उपयोग किया। यथा- पनगढ़ बनाने की युक्ति। युद्ध के दौरान ही बनाया गया नौका-पुल छोटे किले की तरह काम आया। अहोम की बच्छारिना (जो अपने आकार में मुगलों की नाव से छोटी थी) अत्यंत तीव्र और घातक सिद्ध हुई। इन सभी आधुनिक युक्तियों ने लचित की अहोम सेना को मुगल सेना से अधिक सबल और प्रभावी बना दिया। दो दिशाओं से हुए प्रहार से मुगल सेना में हड़कंप मच गया और सायंकाल तक उसके तीन अमीर और 4,000 सैनिक मारे गए। इसके बाद मुगल सेना मानस नदी के पार भाग खड़ी हुई। दुर्भाग्यवश इस युद्ध में घायल लचित ने कुछ दिन बाद प्राण त्याग दिए।

सरायघाट की इस अभूतपूर्व विजय ने असम के आर्थिक विकास और सांस्कृतिक समृद्धि की आधारशिला रखी। आगे चलकर असम में अनेक भव्य मंदिरों आदि का निर्माण हुआ। यदि सरायघाट के युद्ध में मुगलों की विजय होती, तो वह असमवासी हिंदुओं के लिए सांस्कृतिक विनाश और पराधीनता लेकर आती। मरणोपरांत भी लचित असम के लोगों और अहोम सेना के हृदय में अग्नि की ज्वाला बनकर धधकते रहे और उनके प्राणों का बलिदान व्यर्थ नहीं गया। लचित द्वारा संगठित सेना ने 1682 में मुगलों से एक और निर्णायक युद्ध लड़ा। इसमें उसने अपने ईटाकुली किले से मुगलों को खदेड़ दिया। इसके बाद मुगल फिर कभी असम की ओर नहीं आए।
लचित को सम्मान देने के लिए राष्ट्रीय रक्षा अकादमी के सर्वश्रेष्ठ कैडेट को 'लचित बरफूकन स्वर्ण पदक' से सम्मानित किया जाता है। बरफूकन की स्मृति को चिरस्थायित्व प्रदान करने के लिए हुलुन्गपारा में समाधि बनाई गई है।

(लेखक किरोड़ीमल कॉलेज, दिल्ली में हिंदी के प्राध्यापक हैं)
साभार – साप्ताहिक पांचजन्य से